शक्ति निर्धारित करने का अधिकार होना चाहिए।

कानून विषयक धारणा के आधार पर भी लास्की सम्प्रभुता की आलोचना करता है। जहां ऑस्टिन कहता है कि कानून संप्रभु का आदेश है वहाँ लास्की का कहना है कि कानून संप्रभु का आज्ञामात्र नहीं है बल्कि वह परम्पराओं, रीति-रिवाजों एवं धार्मिक नियमों द्वारा निर्मित होते हैं और उसका पालन स्वयं के औचित्य के कारण होता है।

व्यवहारिक आधार पर लास्की राज्य की सम्प्रभुता सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहता है कि राज्य एवं नागरिकों के जो सम्बन्ध होते हैं वे सम्प्रभुता के सिद्धान्त को सिद्ध नहीं करते। प्राचीन युग के निरंकुश शासकों को आंतरिक समूहों के संकुलबद्ध विरोध के सामने झुकना पड़ा और आधुनिक युग के राज्यों को अपने नागरिकों के संगठित विरोध के समक्ष नतमस्तक होना पड़ा है।

अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर भी लास्की संप्रभुता के सिद्धान्त का विरोध करता है। उनका मत है कि अनियंत्रित रूप से यह अन्तर्राष्ट्रीय अशांति और तनाव को जन्म देता है, युद्ध के खतरों को बढ़ाता है। प्रभुसत्ता सम्पन्न राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार में मनमाना आचरण करते हैं। जैसे- जर्मनी, इटली जैसे शक्तिशाली राज्यों ने पोलैण्ड, बेल्जियम और अबसीनीया जैसे निर्बल राज्यों पर आक्रमण कर मानव जाति को असीम कष्ट पहुँचाया है।

बाहरी तौर पर देखें तो निश्चय है निरपेक्ष और स्वतंत्र प्रभुता सम्पन्न राज्य की अवधारणा की मानवता के हितों से संगत नहीं बैठती। विश्व ही वह सच्ची इकाई है जिसके प्रति निष्ठा होनी चाहिए। आज्ञाकारिता का सच्चा दायित्व मानवमात्र के समग्र हितों के प्रति है।

औचित्य के आधार पर भी संप्रभुता की परम्परागत धारणा निरर्थक लगता है। व्यक्ति राज्य के सदस्य के साथ अन्य संस्थाओं के भी सदस्य होते हैं और संस्थाओं का न केवल अनुयायियों पर जोर होता है बल्कि वे स्वयं शासन के संचालन में भी अपना प्रभाव जमाने की कोशिश करती है। इस तरह की संस्थाएँ अपने सदस्यों के लिए उतनी ही स्वाभाविक हैं जितनी कि राज्य स्वयं। लास्की का यह भी कहना है कि वर्तमान समय में समाज की स्थिति इस प्रकार की है कि राज्य अकेला मानवीय जीवन की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ है। व्यक्ति अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक

Scanned with CamScanner

शक्ति निर्धारित करने का अधिकार होना चाहिए।

कानून विषयक धारणा के आधार पर भी लास्की सम्प्रभुता की आलोचना करता है। जहाँ ऑस्टिन कहता है कि कानून संप्रभु का आदेश है वहाँ लास्की का कहना है कि कानून संप्रभु का आज्ञामात्र नहीं है बल्कि वह परम्पराओं, रीति-रिवाजों एवं धार्मिक नियमों द्वारा निर्मित होते हैं और इसका पालन स्वयं के औचित्य के कारण होता है।

व्यवहारिक आधार पर लास्की राज्य की सम्प्रभुता सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहता है कि राज्य एवं नागरिकों के जो सम्बन्ध होते हैं वे सम्प्रभुता के सिद्धान्त को सिद्ध नहीं करते। प्राचीन युग के निरंकुश शासकों को आंतरिक समूहों के संकल्पबद्ध विरोध के सामने झुकना पड़ा और आधुनिक युग के राज्यों को अपने नागरिकों के संगठित विरोध के समक्ष नतमस्तक होना पड़ा है।

अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर भी लास्की संप्रभुता के सिद्धान्त का विरोध करता है। उनका मत है कि अनियंत्रित रूप से यह अन्तर्राष्ट्रीय अशांति और तनाव को जन्म देता है, युद्ध के खतरों को बढ़ाता है। प्रभुसत्ता सम्पन्न राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार में मनमाना आचरण करते हैं। जैसे- जर्मनी, इटली जैसे शक्तिशाली राज्यों ने पोलैण्ड, बेल्जियम और अबसीनीया जैसे निर्बल राज्यों पर आक्रमण कर मानव जाति को असीम कष्ट पहुँचाया है।

बाहरी तौर पर देखे तो निश्चय है निरपेक्ष और स्वतंत्र प्रभुता सम्पन्न राज्य की अवधारणा की मानवता के हितों से संगति नहीं बैठती। विश्व ही वह सच्ची इकाई है जिसके प्रति निष्ठा होनी चाहिए। आज्ञाकारिता का सच्चा दायित्व मानवमात्र के समग्र हितों के प्रति है।

औचित्य के आधार पर भी संप्रभुता की परम्परागत धारणा निरर्थक लगता है। व्यक्ति राज्य के सदस्य के साथ अन्य संस्थाओं के भी सदस्य होते हैं और संस्थाओं का न केवल अनुयायियों पर जोर होता है बल्कि वे स्वयं शासन के संचालन में भी अपना प्रभाव जमाने की कोशिश करती है। इस तरह की संस्थाएँ अपने सदस्यों के लिए उतनी ही स्वभाविक है जितनी कि राज्य स्वयं। लास्की का यह भी कहना है कि वर्तमान समय मे समाज की स्थिति इस प्रकार की है कि राज्य अकेला मानवीय जीवन की विविध आवश्यकताओं को पूरा करने मे असमर्थ है। व्यक्ति अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सामाजिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक

Scanned with CamScanner